ग्रंथमालाके ट्रस्टी

विश्ववंद्य महर्षि आचार्य कुंथुसागरजीका अमरजीवन.

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ति आचार्य शांतिसागर महाराजके अनेक प्रभावक शिष्योंमें आचार्य कुंथुसागरजी अलौकिक तेजको प्रकट कर गये, इसमें कोई संदेह नहीं। आचार्यश्रीको अपने इस शिष्यसे विशिष्ट प्रभावनाकी आशा थी। मामूली पढे लिखे एक साधारण कृषि व्यवसायमें व्यस्त पुरुष अपने अध्यवसाय, लगन व सतत परिश्रमसे अल्पकालमें इतने महान् पुरुष साबित हुआ यह आश्चर्य उत्पन्न किये विना नहीं रह सकता है। आचार्यश्रीने आपको मुनिदीक्षाके बाद कुंथुसागर नामाभिधान किया। शायद इसमें भी कोई गूढ सन्निवेश हो। तीर्थंकर परंपरामें भी शांतिनाथके बाद कुंथुनाथका ही तीर्थ आया था। परंतु दैवचक्र तो दैवतत्वसे उपेक्षित साधु संतोंके प्रति भी अपना प्रभाव दिखाये विना नहीं छोडता है। कुछ ही समयके लिए क्यों न हो इस महापुरुषने अपने सुयोग्य गुरुके सुयोग्य शिष्यत्वको सिद्ध किया। इसमें कोई संदेह नहीं है।

विश्वोद्धार—आपके हृदयमें विश्वोद्धारकी भावना कूट कूटकर भरी हुई थी। आप इस वीतराग शासनको विश्वधर्म सिद्ध करदेना चाहते थे। यही कारण है कि आपने कुछ ही समयमें अपने पुण्यविहारसे जनसाधारणकी दृष्टि इस ओर आकर्षित कर लिया था। सर्व साधारणका अनुराग जैनधर्मके

प्रति उत्पन्न होगया था। और वीतराग धर्मसे जैनेतर समाज भी प्रभावित हुआ था। क्या जैन, क्या वैष्णव, क्या हिंदू व क्या मुसलमान सभी आचार्यश्रीके भक्त बनगये थे। आचार्यश्रीका जीवन कुछ समय और होता तो अवश्य ही वे इसे एक प्रभावक धर्म सिद्ध करते।

नरेंद्रवंद्यत्व—अनेक नरेश आपके पदकमलके परमभक्त बने थे। बडोदा राजधानीमें आपका शानदार स्वागत राजकीय लवाजमेके साथ हुआ। प्रधान मिनिस्टरकी उपस्थितिमें आपका सार्वजनिक धर्मोपदेश हुआ था। गुजरात व बागडके प्रायः सर्व नरेश आपके परमभक्त थे। भलुवा, टौंक, ओराण, बलासणा, सुदासना, पेथापुर, डूंगरपुर, बांसवाडा, मोहनपुर, आदिके नरेश आपका उपदेश सुनने के लिए सदा लालायित रहते थे। इन राजघरानोंमें जैनधर्मके प्रति एवं जैनसाधुवोंके प्रति अनुराग उत्पन्न होनेमें आचार्यश्रीकी आत्मा ही प्रधान कारण है। अनेक राज्योंमें आचार्यश्रीके जन्मदिनके उपलक्ष्य में अहिंसा दिन मनानेकी शाही घोषणा हो चुकी है। यहांपर आचार्यश्रीके अमरजीवनकी ज्योति आचंद्रार्क स्थिररूपसे प्रज्वलित होती रहेगी।

ग्रंथनिर्माण:—आपने विश्वहितके लिए केवल उपदेशके द्वारा प्रयत्न नहीं किया है, किंतु ग्रंथनिर्माण कर युगयुगांतरमें भी विश्व कल्याणका संदेश विश्वके सामने स्थिर रखनेका प्रशस्त कार्य किया है। आपकी ग्रंथनिर्माणशैली, अत्यंत सरल व सुदविर्ण है। आबालवृद्ध आपके ग्रंथोंको समझ सकते हैं।

विषय अत्यंत महत्वके होनेपर भी सरल व अनेक उदाहरणोंसे स्पष्टीकृत होनेके कारण प्रत्येक व्यक्ति उत्सुकताके साथ उनका स्वाध्याय करते हैं। आचार्यश्रीकी यह देन जैन संसारके लिए ही नहीं, सारे संसारके लिए एक अलौकिक चीज रहेगी। पूज्यश्रीने बोधामृतसार, ज्ञानामृतसार, श्रावकप्रतिक्रमण, मुनिप्रतिक्रमण, मुनिधर्मप्रदीप, भावत्रय फलप्रदर्शी, शांतिसुधासिंधु आदि अनेक ग्रंथोंकी रचना कर स्वाध्याय प्रेमियोंके प्रति अनंत उपकार किया है। इस प्रकार पूज्यश्रीने कुछ ही समयमें संसारका अपार उपकार किया है। आपने गुजरात, व बागडके उद्धारके लिए जो प्रयत्न किया था वह युगयुगांतरमें भी विस्मृत नहीं होसकता है। आज भी बागड व गुजरातमें भक्तगण आपके वियोगसे विह्वल होरहे हैं। ऐसे गुरु हमें कब दर्शन देंगे, यह भावना प्रत्येक भावुकके हृदयमें उत्पन्न होरही है।

आपकी वीतरागता, परमनिस्पृह शांतवृत्ति, तेजोमय मूर्ति, गंभीर विचारधारा, वैराग्यमय दिव्यकाय आदि आखोंसे कभी ओझल नहीं हो सकते हैं। आपका भौतिकशरीर यहांपर न रहनेपर भी आपके अमरजीवनकी जागृत ज्योति इस संसारमें ज्यों का त्यों प्रज्वलित है। संसार आपके परोक्ष चरणोंमें श्रद्धांजलि समर्पण करनेमें अपनेको धन्य मानेगा।

प्रकृतग्रंथः—आचार्यश्रीकी स्मृतिमें चलनेवाली श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमालासे अभीतक करीब ४४ ग्रंथ प्रकाशित होचुके हैं। वर्तमानमें जैनदर्शनके महान् तार्किकशिरोमणि महर्षि

विद्यानंद स्वामीके द्वारा विरचित तत्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार ग्रंथका प्रकाशन संस्थासे होरहा है। उक्त ग्रंथके ४ खंड तो प्रकाशित होचुके हैं, ३ खंड और प्रकाशित होंगे। उक्त ग्रंथसे आज विद्वत्संसारका भारी उपकार होरहा है।

इस महान् प्रकाशनके बीचमें यह प्रकाशन सामान्य पाठकों को लाभप्रद होगा।

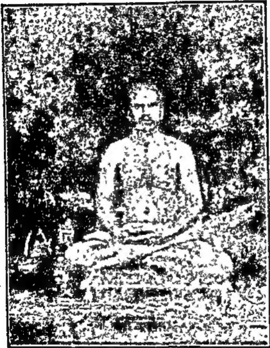
पूज्य स्व. आचार्यश्रीके संकेतसे ही लघुज्ञानामृतसारका काव्यमय भाषांतर कराया गया था। अनेक कारणोंसे उक्त पुस्तकका अभीतक प्रकाशन नहीं हो पाया। अब हम उसे प्रकाशित कर रहे हैं।

इसी प्रकार आचार्यश्रीके परमशिष्य त्यागी धर्मसागरजीने कुंथुसागरपचीसीके नामसे २५ गायनोंसे आचार्यश्रीका गुणगान किया है। उसे भी हमने इसीके साथ प्रकाशित किया है।

इसके अलावा चारित्रचक्रवर्ति विश्ववंद्य स्व. आचार्य शांतिसागर महाराज का अंतिमसंदेश जो यमसल्लेखनाके समय ध्वनिमुद्रित किया गया है, वह भी इस पुस्तकमें मूल—मराठी और हिंदी भाषांतर के साथ दिया गया है। इसे मनन कर भव्यात्मा कल्याणपथमें अग्रसर होंगे ऐसी आशा है।

विनीत—

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री,
ऑ. मंत्री आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला
कल्याणभवन, सोलापुर



श्री विश्ववंद्य आचार्य कुंथुसागरजी महाराज

श्री. १०८ आचार्य श्री कुंथुसागर महाराजरचित

लघुज्ञानामृतसारका हिन्दीपद्यानुवाद

विद्याके जो प्रखर प्रभाकर जिनसे दीप्त त्रिलोक अलोक।
कर्म कषाय जीतनेवाले, जो हैं अभय अमय अशोक।
उनके चरणोंमें नतमस्तक-हो, यह लघुज्ञानामृतसार।
रचते हैं गुरु होवे जिससे अखिल विश्वमें ज्ञान प्रसार॥ १॥

अबतक इन शुभ अशुभ क्रियाओंमें मैं अबतक रमा रहा।
सुख दुःख पुण्य पापमय होकर विषयविपिनमें भ्रमा रहा, ।
पर हे शुद्धिविधायक स्वामिन्। मिले आपके पद हैं आज, ।
लिया आज है आश्रय इनका मिटे शुभाशुभ कर्म समाज॥ २॥

हो, हे कुंथु प्रभो अब मुझको इन चरणोंसे इतनी प्राप्ति।
और मुझे न याचना करनी, करनी है संसार समाप्ति।
शिवसुखकी हो सिद्धि स्वात्म उपलब्धि और परिणाम विशुद्धि।
मिले समाधि अन्तमें मुझको विश्वव्यापिनी हो मम बुद्धि॥ ३॥

इस मानवको भोगपिपासा देती है जो उत्कट क्लेश।
व्याघ्रसिंह नरनारि राहु या केतु नहीं दे सकते लेश।
गज, तुरंग या अग्नि सर्प या वैरी वर्ग आधि या व्याधि।
वैसा दुःख न दे सकते हैं आपद, भूत पिशाच उपाधि॥ ४-५॥

इन्द्र महेन्द्र आदिके वैभव-प्राप्त हुवे जो बारंबार।
उनसे भी भोगेच्छा-नरकी शांत हुई न कभी दुखकार, ।

क्या यह तुच्छ मानवी संपद्, क्या-तृष्णाकी तृप्ति करे।
क्या हाथीके क्षुधितउदरको, जीरेका कण क्षुद्र भरे॥
अहो भासुरी विकट पिपासा क्षीर जलधिसे जो न मिटे।
क्षुद्रताकसे क्या है आशा उस तृष्णाकी व्याधि कटे।
ज्यों ज्यों मिलते शामक साधन त्यों त्यों होती यह उद्दीप्त।
मैंने तो देखा है ईंधन-से ज्वालाको सदा प्रदीप्त॥ ६-७॥
जो विशिष्ट पुण्यात्मा कहलाते हैं देव स्वर्गवासी।
किंतु सुना है यह तृष्णा उनके भी गर्दनकी फांसी।
पुण्यहीन जो इतर जीव हैं उनकी कथा कहे अब कौन।
उनकी विकट व्यथा लिखनेको है यह क्षुद्र लेखनी मौन।
जिस प्रलयंकर पवनपुंजसे, अचल शिलोच्चय डोल उठें।
शिरा शिरा, क्या त्राहि त्राहिकर वृक्षोंकी नहिं बोल उठें?॥
तीन लोकको भस्म करे जो कुपित प्रलय पावक अतिघोर।
वहां बचेंगे क्या तृण जीवित लाख लाख करके भी शोर॥ ८-९॥
इस नर जीवनमें पदपदपर आती हैं आपत्ति अनेक,।
भरा हुवा है रोग राशिसे उनका रोम रोम प्रत्येक।
इस तरुणाईकी मादकता भरे वृद्धतासे आक्रान्त।
और कालके मुखमें रहता नरका आयुष्कर्म नितांत।
फिर भी खेद यही है प्राणी सदा चाहता नश्वर भोग।
इन हीमें सुख मान रहा है, है कीलित इसका उपयोग।
हा, संताप शांत करनेको करता है यह अग्नि प्रवेश।

हालाहल भक्षण करता है, प्राणकाम हित यह मूर्खेश ॥१०-११॥

अहा, इन्द्रियोंकी अभिलाषा–शांति हेतु यह मूर्ख महान ।
भोग और उपभोग वस्तुयें जुटा रहा देखो अज्ञान ।
रे, हो, अग्नि बुझानेवालों, सोचो मनमें करो विचार ।
घृत छिड़केसे अग्नि बुझेगी या होगी उद्दीप्त अपार ।
इस कुटुंबको सुखी बनानेका मनमें जो है संकल्प ।
इसी हेतु करते हो संचित भोग वस्तुयें भरे अनल्प ।
अहो, उखाड़ कल्पतरु तुमने बोया है घरमें किंपाक ।
सुख औ शांति कुटुंब तुम्हारा प्राप्त करेगा अब क्या खाक ॥
अरे, देहकी रक्षामें रत विषयभोगके अभिलाषी
द्रव्य उपार्जनके व्रतधारी कीर्ति विभवके आकांक्षी ।
धर्माचरण छोड़ सब बैठे जप तप मनसे दिये निकाल ।
रत चित हो दौड़ रहे हैं विषयोंके वनमें बेहाल ॥ १४ ॥

विषयी पूजा दान छोड़के स्वर्गमोक्षसे होते दूर ।
इह लौकिक सुख भोग कीर्तिको भी ये करते चकनाचूर ।
उतो भ्रष्ट हो इतो भ्रष्ट भी होते ये विषयोंके मित्र ।
सत्य कहा है विषयाधोंकी होती है गति महा विचित्र ॥ १५ ॥

सलिल बिंदुसे जलधि न धापे अग्नि काष्ठ से हो नहि शांत ।
मृत्यु मरण से तृप्त न होती और तैल से दीप नितांत ।
धनसे कृपण न कभी अघाता पर ये सब भी हो जावें ।
पर यह संभव कभी नहीं जो विषयी विषय भुलापावें ॥ १६ ॥

छीनत्यादिके सौख्य शांतिहित,तृष्णाका यह रूप विचित्र ।
' भवप्रद है संसार प्रवर्धक ' ऐसा कहते गुरु जगमित्र ।
कुंथुसिंधु आचार्य शिरोमणि जिसने पाया आत्मानंद ।
करते हैं उपदेश हितंकर, 'तजो भव्य तृष्णाका फंद' ॥ १७ ॥
प्र.:—सुनकर शिष्य खड़ा हुआ हो मन खिन्न अतीव ।
कहिये गुरु किसवस्तुसे होय तृप्त यह जीव ?
उ.:—अहो भव्य वह वस्तु विश्वमें ज्ञानामृत है परमपवित्र ।
जो यथार्थ तृप्तिदाता है जो जीवोंका सच्चा मित्र ।
जन्ममृत्युका नाशक है यह महा मधुर मंगलमय मिष्ट ।
उसका निश दिन पान करो जो चाहो निजकल्याण विशिष्ट ॥
प्र.:—गुरु सन्मुख तब शिष्य उठ खड़ा हुआ स्वयमेव ।
ज्ञानहीन जन विश्वमें शोभे या नहिं देव ? ।
उ.:—विनय विना मस्तक नहिं शोभे, जिन दर्शन बिन ये युग नैन ।
घ्राण न शोभे पर सौरभ रत मधुर तथापि सत्य बिन बैन ॥
ईश प्रार्थनाहीन वदन ज्यों शास्त्रश्रवण बिन-रुचे न कान ।
आत्मगीत बिन कंठ न सोहे हस्त अशुभ जिनसेवा-दान ॥ २० ॥
तीर्थाटन बिन पाद न सोहे उदर अनर्गल भक्षणसे ।
निज रस स्वाद विहीन रसज्ञा देश शून्य ज्यों शिक्षणसे ॥ २१ ॥
नीतिविहीन शौर्य नहिं शोभे धर्महीन ज्यों जगनेता ।
मिथ्यापक्ष लिये, न चतुर भी वक्ता ज्यों शोभा देता ।
बहु अधिकारी होकर भी जो स्वार्थसिद्धि करते केवल ।
अथवा पापकार्य रत रहते तो शोभा हो किसके बल ? ॥ २२ ॥

द्रव्यहीनका भोग न शोभे दरिद्रकी आशा फलहीन।
दुष्ट पुरुषकी बात अनादरयोग्य बताते पुरुष प्रवीण।
उसका मानव जन्म वृथा है जिसने त्यागा नहीं प्रमाद।
उस राजाकी क्या शोभा जिसका सम हो नहिं दृष्टि प्रसाद॥२३॥
उसी भांति विज्ञानहीनके शरीर जानो शोभाहीन।
जिन भाषित सुखदायक व्रत उपवास आदि भी उसके दीन।
सम्यक ज्ञान विना जप तप, कल्याण मार्गमें हैं असमर्थ।
नेत्रहीन मानवकी जैसे सब शृंगार–कल्पना व्यर्थ॥ २४॥
प्रश्नः—बोला शिष्य विनीत अति अब कहिये मुनिभूप।
वाञ्छितदायक मुक्तिप्रद–सम्यकज्ञान स्वरूप॥
उत्तरः–व्यय उत्पाद ध्रौव्यसंयुत हैं जो जिनकथित अनेक पदार्थ।
सप्त तत्त्व पंचास्तिकाय षट्द्रव्य आदि जो वस्तु यथार्थ।
संशय विमोह विभ्रमवर्जित उन्हें जानना निश्चयरूप।
क्रिया सफलता हेतु, मोक्षप्रद है वह सम्यग्ज्ञानस्वरूप।
स्वयं प्रकाशी दीप विश्वमें प्रकाश करता है जैसे।
सम्यग्ज्ञान आत्मपर सबका वेदन करता है वैसे॥ २५-२६॥
अरे ज्ञानसे [illegible] तो रक्षित आत्माके दर्शन चारित्र।
आता है अनुभवमें इस ही से तो आत्मानंद पवित्र।
ज्ञानविना असमर्थ जीव यह कैसे उतरे भवसागर।
किसके बलसे रुके रहेंगे, कर्म कषाय कुटिलतस्कर?
अहो ज्ञानबिन साधन क्या है, आत्मशुद्धिका संसृतिमें।

देतु बनेगा कौन सिद्धिहित निज समृद्धिकी सुरमूर्तिमें ।
आत्म देहकी सहज भिन्नता ज्ञानबिना पहचाने कौन !
निज साम्राज्य प्राप्तिका जगमें यथार्थ साधन जाने कौन २७-२८
क्रोधमान माया तृष्णाका कहो कौन परिहार करे !
ज्ञान बिना [illegible] मोहशत्रुका कौन सबल संहार करे !
शांति सौख्यके सुन्दर साधन ज्ञानबिना बतलावे कौन !
मैत्री और प्रमोद चित्तमें लावे कौन बढावे कौन !
चित्तरूप यह चंचल पक्षी किसके वशमें हो बिनज्ञान !
स्वात्मसौख्यका औ स्वधर्मका कैसे होवे निश्चय भान !
इसीलिये हे भव्य सदा तुम प्राप्त करो यह सम्यक्ज्ञान ।
इसके मिलजाने पर समझो प्राप्त होगया मुक्तिस्थान २९-३०
यही ज्ञान है जो करता है निज औ पर दुखका परिहार ।
यही ज्ञान है जिससे होता कर्मबंध सब जलकर क्षार ।
यही विश्वकी मधुर सुधा है अजर अमर अक्षय पदमूल ।
यह स्वर्गीय सुरभि संयुत, कमनीय कीर्तिका सुन्दरफूल ।
इसी ज्ञानसे भवभयहरिणी दयाबुद्धि होती उद्भूत ।
[illegible] ही के बल विश्व-प्रवाहित करुणा कृपामयंजन पूत ।
जैनधर्मका मूलमर्म यह जगमें जानो सम्यक्ज्ञान ।
इसकी प्राप्ति भव्य नित चाहो धरो हृदय इसहीका ध्यान ३१-३२
जो दुखदायक मान मतंगज करता विश्वशांति सुखभंग ।
यही ज्ञान है जो करता है उस मतंगको तत्क्षण तंग ।

सुहित मार्गमें गमन कराता तृप्ति कराता निज रसमें ।
आत्म देशमें यह पहुंचाता करता जग अपने वशमें ।
सौख्यस्वरूपी रत्नत्रयमें करवाता यह आत्मनिवास ।
यही ज्ञान है कर्मोंका जो करता शीघ्र समूल विनाश ।
सत्य यही है सुन्दर भी यह यही समझलो है शिवरूप ।
इसकी प्राप्ति करो निजपाओ हो जाओ इसमें तद्रूप १३-१४

घोर तपस्या करो सदा तुम चाहे तनको दो संक्लेश ।
ज्ञान बिना इस कर्म कालिमाका न हटेगा तुमसे लेश ।
घोर विपिनमें जैसे कोई शक्तिसहित भी चक्षु विहीन ।
मार्ग न पाकर भटका करता करके अपने सुखको हीन ।
इच्छा रहित महामुनि ज्ञानी अल्प तपस्या से भी किंतु ।
आत्मशक्ति उद्घाटित करके काटें विकट कर्मके तंतु ।
जिस प्रकार वे घाति विघाती केवलज्ञानी श्री अरहंत ।
क्षुधा पिपासादिक दोषोंका करते ज्ञान शस्त्रसे अंत ॥ १५-१६॥

किये जाय इस ज्ञानद्रव्यसे धर्मकार्य निज पर उपकार ।
अथवा आत्मसाधना करके करे अविद्याका परिहार ।
ज्ञान द्रव्य भी अति विचित्र है बढ़ता है व्यय करनेसे ।
और नष्ट होता है यह व्ययहीन बुद्धिमें धरनेसे ।
चोर इसे न चुरा सकते हैं, नृप इसे नहिं सकते छीन ।
बंधु मित्र परिवारी भी हैं इसे बंटानेमें अति दीन ।

ऐसा अनुपम ज्ञान ग्रंथ है इसको प्राप्त करो हे वीर।
तभी चतुर विद्वान बनोगे होंगे धीर वीर गंभीर ॥ १७-१८ ॥
ज्ञान तुरय गुणकारी सुखपद दुखहर और पवित्र महान।
संसृति हारी निज सुखकारी, निजबोधक नाशक अज्ञान।
सुख सौभाग्य विवर्धनकारी उपकारी औ आनंद स्वरूप।
सत्यप्रकाशी भ्रमतमनाशी जगमें है न पदार्थ अनूप ॥१९-२०॥
मूर्ख नृपति निजदेशपूज्य है, और कुपुत्र अपने घरमें।
मूर्ख धनिककी कहां प्रतिष्ठा ? होवे तो भी निजपुरमें।
अल्प देशमें वैद्य प्रतिष्ठित, यंत्र मंत्र भी थोड़ी दूर।
सैन्य सचिव कुछ लोकप्रतिष्ठित यों ही शक्ति भक्ति परपूर।
पूजे जाते अपने स्थलपर बड़े बड़े पर्वत भी गेह।
त्योंही दानी मानी और विपरीत वेश धारीकी देह।
किंतु ज्ञान है वह अपूर्व धन जिसका पूजक है सब देश।
सब नरनारी उसे पूजते उसे पूजते सर्व नरेश ॥ २१-२२ ॥
विषम दुःख देनेवाली जो आत्मा प्रमावकारिणी बुद्धि।
माया मत्सरतादि दोष जो हरते हैं आत्मीक विशुद्धि।
यही ज्ञान है जो करता है इन दोषोंका पूर्ण प्रहार।
जैसे पावक तृणसमूहको शीघ्र जलाकर करता क्षार।
गाढ अशुद्ध अंधकारका नाशक है यह सम्यक्ज्ञान।
आत्मद्रव्यका विशद तथा प्रतिभासक है यह सम्यक्ज्ञान।
राग द्वेष औ विषयेच्छाओंका अंतक यह सम्यक्ज्ञान।
आत्मदेशका दिव्य सूर्य है सुखदायक यह सम्यक्ज्ञान ॥२३-२४॥

पथभ्रष्टोंको प्रशस्तपथ दिखलाता है यह सम्यक्ज्ञान।
भ्रांति नष्टकर आत्मतत्त्व बतलाता है यह सम्यक्ज्ञान।
करता है चारित्रवृद्धि परिणामशुद्धि यह सम्यक्ज्ञान।
स्वर्ग मोक्षदायक, करता परलोकसिद्धि यह सम्यक्ज्ञान।
मनके सारे मैल हटाकर अति पवित्रता देता ज्ञान।
आत्मधर्मकी श्रद्धाके मलदोष सभी हरलेता ज्ञान।
स्वपरशुद्धिप्रद अति उदार भावोंको मनमें लाता ज्ञान।
आत्मतुल्य यह मोक्षमार्गका सच्चा शुद्धि विधाता ज्ञान ॥ ५-२६॥
आदि नहीं है अन्त नहीं है जिसका कभी विनाश नहीं।
विघ्न नहीं बाधा नहिं जिसमें श्रम भी लेवमात्र नहीं।
शाश्वत सौख्यरूप जो अद्भुत जो केवल चैतन्य महान।
ऐसे अनुपम मोक्षसौख्यको ज्ञान बिना को करे प्रदान ॥ ४७ ॥
दानधर्मका मार्ग चला कर प्रगटे शशितुल्य सुकीर्ति।
जो अन्याय नाश करनेवाली बतलावे वर नृपनीति।
मोक्षप्रदायक धर्म अर्थ औ काम रूप जो वर पुरुषार्थ।
इनकी प्राप्ति करानेवाला ज्ञान बिना है कौन पदार्थ ? ॥ ४८ ॥
होता है विस्तृत वसुधापर दीर्घविचारी औ विद्वान्।
नरनरेंद्र औ सुरसुरेन्द्र होते हैं वश उसके हित ध्यान।
क्या बाधा है जोको उसके सफल मनोरथ [illegible]
कर देता पत्थरको परिणत वह पुरुषार्थी सोनेमें।
शीतातृष्णा विषयपीडा कौन उसे दुख दे [illegible]
क्रूर पिशाच दुष्ट मद भी क्या उसके [illegible]

कौन करे व्याख्यान ज्ञानकी अनुपम गौरव गरिमाका ।
अन्त मिला है किसको इसकी दिगंतव्यापी महिमाका ॥४९-५

चित्तवृत्तिको रोक कामकी कुत्सित चेष्टा दूर करे ।
दैहिक वांछाका विनाशकर जगमें दिव्य प्रकाश भरे ।
सुख संपद संपादन करता विपद व्यथाका नाश करे ।
द्वेष दुष्टको दूर हटाकर समताभाव प्रकाश करे ।
पाप नाशकर पुण्य बढ़ावे क्षुधा नींदके दोष हरे ।
यही ज्ञान है शिवप्रद, यों श्रीकुंथुसिंधु व्याख्यान करे ॥५१-५२॥

ज्ञान विश्वमें इस मानवका कहलाता है नेत्र यथार्थ ।
यही विशद है यह पवित्र है बाधारहित अमूल्य पदार्थ ।
गुणपर्याय सहित द्रव्योंका सत्य विवेचन करता है ।
स्थूल सूक्ष्म पर्यायोंका भी पूर्ण प्रकाशन करता है ।
तीन भुवनका भास्कर है यह धर्मप्रकाशक सम्यक्ज्ञान ।
सर्वसिद्धिका दाता यह आनंदप्रदायक वस्तु महान ॥ ५३-५४ ॥

ज्ञानहीन जन अलिक वस्तुका करता है अनियम अपहार ।
पशु समान आचरण करे दुष्कृतिरत उसका चित्त विकार ।
विवेकवंचित सदा मूर्ख वह करता रहता व्यर्थ प्रलाप ।
ज्ञान हीन नर जीवन पाकर करो न पर आमोद प्रमोद ।
धर्मशून्य व्यवहारशून्य वह करता संचित निशदिन पाप ।
आत्मबुद्धिसे रहित मूर्ख वह करता निजका परका घात ।
उसके निकट व्यर्थ करना आचार विचार विषयकी बात ।
पशु तो पशु होकर ही पशु है पर यह पशु है मानवनाम ।
इसीलिये पशु सभी पशु है ज्ञानहीन नर अघका धाम ॥५५-५६॥

विश्व विजयिनी मृत्यु डाकिनीको ज्ञानीजन विजित करें।
जो आध्यात्म दक्ष होकर व्यवहार दक्ष हो विश्व करें॥
इसी ज्ञानसे कला प्रगट हो कुकलाओंका हो खंडन।
कीर्ति प्रसारित हो त्रिभुवनमें औ कुकीर्तिका हो [illegible]॥
नर अमरेन्द्र करें ज्ञानीका पूजा, स्तवन और [illegible]॥
नर धरणेन्द्रनाथ हो ज्ञानी सुखद मुक्तिका हो [illegible]
ज्ञानविहीन तुच्छ नरके जपतप व्रत औ पौषध [illegible]॥
ध्यान मौन औ दया सामायिक भजन कथा विचार [illegible]॥
सुन्दर चालचलन मृदुवाणी संयमधारणा [illegible]
चंद्रविहीन रात्रि सम सारे रूप कलादिक हैं [illegible]
प्रतिभदायक अहित मार्गसे हटता नहिं [illegible]
हित पथको, इच्छित पदार्थको होती उसके [illegible]
दुखदायक संसारचक्रसे मुक्ति कभी नहिं [illegible]॥
निज प्रदेश आनन्द भवनमें अश्व कभी नहिं [illegible]॥
जावे तो भी ठहर न सकता जैसे दीपक [illegible]॥
अंधकारमें कभी न कोई जावे जाकर नहीं [illegible]॥
चंद्र सूर्य दीपक तारे भी वस्तुप्रकाशक [illegible]
पर स्वक्षेत्रमें बाह्य अल्प ही वस्तु प्रकाशित [illegible]।
किंतु ज्ञान है जो कि जानता तीन [illegible]।
अखिल द्रव्य अविकल पर्यायें [illegible] टाक।
इसीलिये मैं यही समझता ज्ञान [illegible]।
है इस जगमें प्रबल प्रकाशक सब [illegible]

ज्ञान प्राप्त करके भी जो नहिं करते शिवदायक शुभकार्य ।
मानवजन्म कृत्य नहीं करते शांतिपदायक जो कि अनार्य ।
निज साम्राज्य मूल नहीं करते अहो मूर्ख जो तत्त्व विचार ।
निजानंदमय अमृतका जो पान करें नहीं अहो गँवार ।
कुलकी और जातिकी रक्षा करे नहीं जो पाकर ज्ञान ।
स्वर्गमोक्षपथ विचलित है वो परम दुष्ट औ मूर्ख महान ६५-६६

कैसे पुण्य बिना हो पूरी राज्यप्राप्तिकी अभिलाषा ।
आस्य विना भाषणकी वांछा धर्म विना निधिकी आशा ।
पांव बिना क्या गमन करे औ नेत्रबिना क्या देखे रूप ।
कैसे पावे ज्ञानबिना नर सुखदायक शुचि मोक्ष अनूप ॥६७-६८॥

ज्ञानी श्रेष्ठ पुरुषकी जगमें जनरक्षक हो नीति महान ।
सकल अर्थकी सिद्धि स्वपरकी शुद्धि करे वह भव अवसान ।
ज्ञानहीन परतंत्र दुष्टकी नीति सदा जग दुखकी खान ।
सकल अर्थ नाशक कलहप्रिय पाता पद पदपर अपमान ॥६९-७०॥

अग्निप्रवेश करो तो अच्छा पीलो चाहे विषका घूंट ।
व्याघ्रसिंह खाजावे अच्छा भले मारदे गज या ऊंट ।
मरना हो तो मरो खुशीसे भ्रमण करो या नरक निगोद ।
इसीलिये है यही भावना मेरी निशदिन हे भगवान ।
मेरा महाशत्रु भी कोई रहे न जगमें [illegible] अज्ञान ॥ ७१-७२ ॥

ज्ञानहीन जनका जगतीमें समताशील धर्म उपदेश ।
मबल शौर्य ऐश्वर्य अनुपम कांति शांति औ सुगुण विशेष ।

कलित क्रियायें ललित कलायें मक्ति शक्ति जग वशकरणी।
अन्ययोग भी सकल विकल है बिना एक सद्ज्ञान मणि ७३-७४

ज्ञानयुक्त उत्तम मानवको जैसा वांछित सौख्य यथेष्ट।
देता है सुज्ञान निरापद वैसा सौख्य न नर सुरश्रेष्ठ।
मातापिता बहिन या भार्या मित्रपुत्र या बंधुविशेष।
यंत्र मंत्र सामंत वर्ग भी दे नहिं सकते यश नरेश ॥ ७५–७६।

देव धर्म कुल गोत्र जाति इह लोक और पर लोक पुराण।
पाप पुण्य नर भेद जन्म यम नरक निगोद मोक्ष बंधान।
विधि निषेध गुरु कुगुरु न माने मूर्ख, जीवकी गति औ स्थान।
इसीलिये है कहना पड़ता पापमूर्ति जगमें अज्ञान ॥ ७७–७८

जन्म मरणका बंधमूल है। जो जगमें मिथ्यात्व महान्।
विषयोंकी अभिलाषा आशा जगजंजाल भ्रांतिकी खान।
पापबीज है जो उपजाता जीवोंको दुख व्यथा विषाद।
ज्ञानी उन्हें नष्ट करता है रवि ज्यों अंधकार उन्माद ॥
इच्छारहित किन्तु इच्छित पद अपतर नियम धारणा ध्यान।
जिनवर कथित मार्ग जो देता जगको सौख्य शांति कल्याण।
दया क्षमा और साधुशीलता शिवसुखके जो कारण मूल।
उन्हें ग्रहण करनेमें ज्ञानी करता कभी न जगमें भूल ॥७९–८०

ज्ञानहीन निज दोषराशिको कभी जाननेमें न समर्थ।
बाह्य वस्तुको और जाननेका करता फिर क्यों श्रम व्यर्थ।

परम ज्ञानसे बंध बंध है है न जगतमें बंधा अन्य ।
यह सच्ची परमार्थदृष्टि है इसका है विश्वास अनन्य ।
ज्ञानहीन हो ओरे हीन है वही दीन है जगमें एक ।
निजानंद सुखमें निमग्न श्री कुंथुसिंधुका यही विवेक ॥ ८१-८२ ॥

गीता-छंद—इस ग्रंथकी जगमें पठन पाठन करें जो भव्यजन ।
उनका सदा कल्याण हो यों कुंथु कहते ज्ञानधन ।
अर्हंत सिद्ध सुसूरि सारे दे उन्हें मंगल सदा ।
आचार्य शांति सुधर्मसागर मोक्ष सुख दे सर्वदा ॥ ८३ ॥

दोहा—शांतिसिंधुके शिष्य श्री कुंथुसिंधुने ग्रंथ ।
लघुज्ञानामृतसार रच प्रगट किया शिवपंथ ॥ ८४ ॥

गुरुपद कमल पराग में अक्षय नाम कुमार ।
गुरु रचनापर पद्य रच हर्षित हृदय अपार ॥
गुरुका ग्रंथ विशाल है, उसका अर्थ गंभीर ।
यथामति निज बुद्धिसे रचे पद्य गुरुवीर ॥

श्री आचार्य कुंथुसागर महाराज विरचित

लघुज्ञानामृत सारका पद्यानुवाद

समाप्त

—०—



श्री १०८ आचार्य श्री कुंथुसागरजी महाराज रचित

'लघुबोधामृतसार' का पद्यानुवाद ।

(दोहा)

नमों ज्ञानरवि स्वर्गप्रद,
मुक्तिरमा भरतार ।
बोध हेतु निर्मित करूं,
लघुबोधामृतसार ॥ १ ॥

(उपजाति छंद)

आया कहांसे, चलना कहांको ।
क्या कर्म करना जगमें मुझे है ।
संसार ज्ञाता नर नित्य ऐसा ।
स्वचित्तमें निश्चयसे विचारे ॥२॥

(१) नरकमें कौन जाता है !—

कुदेव सेवी शठ धूर्त क्रूर
कुटुंबद्रोही कुलजातिद्वेषी ।
क्रोधी, कुमानी, गुरु-धर्म द्रोही,
निंदा करे जो शठ दानियोंकी ॥३॥
जो श्रावकोंका उपकारकोंका,
बने विरोधी शुभ साधकोंका ।
जो शीलघाते पर कपटधारी,
हा, हंत ! होता नरकाधिकारी ॥४॥

(२) तिर्यंच कौन होता है:—

आचारसे हीन विवेकशून्य ।
आलस्यवाही व प्रलापकारी,
विरुद्धगामी व अभक्ष्यभक्षी
जिह्वावशीभूत कुचक्रवेदी ॥

मानी व लोभी, विषयी कृतघ्नी ।
न धर्मधारी न उदारदानी,
ऐसा अभागा नर पुण्यशून्य ।
तिर्यंच होता अगले भवोंमें ॥६॥

(३) मनुष्य कौन होता है:—

थोडा करे क्रोध प्रवृत्ति सीधी ।
दयालु हो संसृतिसे डरे जो,
विनम्र हो शांत समानदृष्टि
हो धर्मप्रेमी व कुधर्मद्रोही ॥ ७ ॥

जो देव औ शास्त्र सुधर्मसेवी ।
दानी करे जो गुरुपादभक्ति ।
पूजादि सोत्साह करे सदा ही.
उसे मिलेगा नरजन्म आगे ॥८॥

(४) स्वर्गमें कौन जाता है—

संसार, ये भोग, शरीर, सारे ।
जिसे न मोहें वह सद्गृहस्थी ।
सम्यक्त्वधारी वह साधु होगा ।
संसारका पार जिसे दिखा हो ॥९॥

स्वाध्यायप्रेमी तपका तपैया ।
जो आत्मशोधी स्वपरोपकारी,
वो भव्य ही तो शुभभावनासे
होता सुखी स्वर्ग-समृद्धि पाके ॥१०॥

(५) मुक्ति कौन पाता है:—

महाव्रती जो त्रय गुप्तिधारी ।
हो ब्रह्मचर्या जिसकी सदा ही ।
संसारका अन्तक शुक्लध्यानी ।
स्वराज्यकामी निजधामगामी ॥११॥

कर्मादिका शत्रु चिदात्मवेदी ।
जिसे सदा स्पष्ट निजात्मभूति ।
वही प्रभू कर्मकलंकहारी ।
योगी वरे सुंदरि-मुक्तिनारी ॥१२॥

(दोहा)

कुंथुसागराचार्यकी ।
कृतिका ले आधार ॥
भाषामें ये पद्य लिख ।
अक्षय मुदित अपार ॥

—x—

श्रीकुंथुसागर पच्चीसी

स्व. परमप्रभावक आचार्य कुंथुसागर महाराजकी स्मृतिमें
विरचित पच्चीस भजनोंका संग्रह
[रचयिताः—श्री त्यागी धर्मसागरजी]

[भजन नं. १]

॥ तर्ज—छोटो मोटो सुईयांरे ॥

कुंथुसिंधु महाराज ! दुखियाके दुखको टालना ॥ टेक ॥
आप तिरे हो गुरू औरोंको तारना, हां २, येहि अरज होवे धार दुखियो निकट बुलावना ॥ कुंथुः ॥ १ ॥ अष्ट करम गुरू अति दुख देवे, हां २, यो दुख सह्यो नहीं जाय, कर्मोंसे छुडावना ॥ कुंथु ॥२॥ समता सरोवर करुणाके सागर, हां २, गुरुवर दीन दयाल, प्रेम बरसावना ॥ कुंथु ॥ ३ ॥ अमृत प्याला गुरुवर पीलावे हां २, येहि ईच्छा दिल माहीं, अरजी तो हिये धारना ॥ कुंथु ॥ ४ ॥ पटकायाके हो प्रतिपालक, हां २, जल्दीसे कर गुरु पार, धरमको निभावना ॥ कुंथुः ॥ ५ ॥

[भजन नं. २]

॥ तर्ज—मायला मान मान मेरी मान ॥

ऋषीवर कुंथु सिंधु पधारे हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ टेर ॥ कुंथु गुरू आये नवनिधि लाये, छटो भविजन आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ १ ॥ ऋषीवर आये सब मन भाये, अमृत बरसे आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ २ ॥

पर उपकारी गुरू हितकारी, काटो करम ऋषि आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ ३ ॥ पूरण भाग्य उदय भारतको, आये गुरूवर आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ ४ ॥ संघसहित गुरु देव ही विचरे धर्म दीप आयो आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ ५ ॥

[भजन नं. ३]

॥ तर्ज–स्वारथका संसार बंधु मेरे ॥

कुन्थु सिन्धु महाराज तारनवाले, कर भवदधिसे पार गुरुदेव हमारे ॥ आप तिरे औरन को तारे, गुरुवर दीनदयाल तारनवाले ॥ टेर ॥ १ ॥ सब जीवोंके गुरु हितकारी, भव्यजीवोंके प्रतिपाल, तारनवाले ॥ २ ॥ जैन अजैन सब दौड़कर आवे, सबको करो निहाल हो तारनवाले ॥ ३ ॥ सबजीवोंको गुरु समझावें, छोड़ो सभी जंजाल तारनवाले ॥ ४ ॥ त्यागी धर्म सब ऋषि मुनियोंको, नित्य नवावे भाल ॥ ५ ॥

[भजन नं. ४]

॥ तर्ज–थोड़ीसी जिंदगीमें क्यों किसीसे, कडवा बोले ॥

गुरुवर कुंथुदयाल, विश्वके हो हितकारी ॥ आप तिरे हो गुरुदेव, हमको तारनवाले ॥ डूबे हैं भवदधि माहि जल्दी करो किनारे ॥ १ ॥ कुन्थुसिन्धु ॥ लगती जनताकी भीड़ सुनकर अमृतवाणी भव्योंका करो उद्धार, यही है अर्ज हमारी ॥ २ ॥ गुरु ॥ षटकायाके जीव, तिनके हो प्रति पालक ॥ इन्द्रियोंको कीना आधीन, सुमति हे गुरु प्यारी ॥ ३ ॥ पंच महाव्रत धार, पांचों

समिती समारी ॥ तीन गुपति उरधार,कीनी मोक्षकी तयारी ॥४॥
त्यागी भरम गुरु धार, करता जय जयकारी करो, भवदधिसे पार,
यही विनती हमारी ॥ ५ ॥

[भजन नं. ५]

॥ तर्ज–पारसोला थारी गली सुधर गईरे ॥

गुरु कुन्थु हमारे, चारों वरण को तारे ॥ टेर ॥
ब्राह्मण कहे गुरुदेव हमारे, क्षत्री कहे मुझ प्यारे । वैश्य–
दौड चरणोंमें आये, शूद्रोंका कीना सुधार ॥ १ ॥
कन्याविक्रय अरु मरण भोजने, भारतको सभी उजाडे ॥
श्रीगुरु उपदेशामृतसे, कुरिती किया किनारे ॥ २ ॥
दक्षिण और उत्तरको सारी, गुजरात सभी सुधारे ॥
बागड सभी सुधारके, आये मेवाड किनारे ॥
तेली तंबोली माची मोची, सभी करे पुकारे ॥
सुनार सुतार लवार पटेल कहे, अमो गुरुदेव [illegible] ॥
क्रोध तजो मायाको छोडो, लोभको दो फटकारे ॥
त्यागी भरम यही समझावें, हो भवदधिसे पारे ॥
॥ गुरुदेव हमारे ॥ कुंथु हमारे ॥

[भजन नं. ६]

गुरुवर ज्ञान सिखाओ, हमारे घर आवोना ॥
तम अज्ञान मिटाओ, सुमति प्रकटाओना ॥
स्वामी अविद्याका, छाया अन्धेर है ॥ १ ॥

कर्मोंका चक्कर है, किस्मतका फेर है ।
झंझटमें आके ये, संध्या सवेर है ॥
क्या जाने कितनी सुधरनेमें देर है ॥ ४ ॥
स्वामी कृपा दिखलाओ ना ॥
पतितोंको स्वामी, तुमहीनें उठाये हैं ।
भूले हुओंको, सुपथमें भी लाये हैं ।
सोते हुवोंको दयाकर जगाये हैं ॥ ४ ॥
दुष्कर्म दुष्टोंको, जगसे भगाये हैं ।
स्वामी हमें भी जगाओना ॥ २ ॥ गुरुवर ॥
हमको कषायोंने है नाथ पकड़ा ॥
विद्वेष संक्लेश भावोंने जकड़ा ॥
वे धर्म जीवन हमारा हैं बिगड़ा ॥
किससे कहें नाथ अपना ये दुखड़ा ।
धर्म कहे दुखोंसे छुड़ाओना ॥ ४ ॥ गुरुवर ॥

[भजन नं. ७]

॥ तर्जः—मायरी मेरी मन वेरी लाल हरे ॥
गुरू कुन्थु हमारी, आरजीपे ध्यान धरो ॥
क्रोधमान मद लोभ फिरते हैं, इनको दूर करो ॥ टेर ॥
काल अनन्तसे भ्रमण करतमें । आयो न धरम खरो ॥२॥
सत्य पंथ मुझे सुझे, नाहीं गुरू अन्तर दीपहरो ॥
जड़ता हृदय, सद्बुद्धि ना आवे ॥
सौम्य प्रकृति करो ॥ गुरू ॥
त्यागी धरमकर जोड़ी विनवे ॥ मनउर आनन्द भरो ॥२॥

[भजन नं. ८]

॥ तर्ज–मोक्ष जानेका मेरा इरादा हुआ ॥

मेरे भगवान् मेरी यही आशा है ॥ पूर्ण कर दोगे इच्छा ये विश्वास है ॥ १ ॥ मेरे मनमें सदा, आपका ध्यान हो ॥ अपनी जातीका, कुलका सदा मान हो ॥ २ ॥ धर्मसेवामें अर्पण, सदा प्राण हो ॥ मेरे तनमें सदा देशका ज्ञान हो ॥ मेरे भगवान् ॥ ३॥ पांव उन्मार्गमें मैं, कभी ना धरू ॥ न्यायनीतिसे जीवन ये पूरा करू ॥ जातिसेवामें स्वामी, खुशीसे मरू ॥ मेरा मन आपके चरणोंमें सदा भरूं ॥ मै तो बलहीन हूं नाथ बल दीजिये । मेरी इच्छाये स्वामी, सफलता कीजिये । मेरी सारी समस्याये हल कीजिये । आपके चरणोंमें वास दीजिये ॥ मेरे भगवान् ॥

[भजन नं. ९]

॥ तर्ज–तुलसी मगन भये प्रभू गुण गायके ॥

कुन्थुसिन्धु गुरु देवा, सत्यको बतायके ।
भ्रमको मिटायके, सत्यको बतायके ॥ टेर ॥
क्रोध मान माया, नरकोंका मारग ।
क्षमा सत्य समतासे, इनको हटायके ॥ टेर ॥
हिंसा झूठ चोरी, सत्य गुण नाश करें ।
अहिंसा सत्य, अचौरि अशान्तिसे मिटायके ॥ १ ॥

जूआ चोरी और वेश्या, धर्मको नाश करे।
गुरुदेव कहे प्यारे इनको भगायके ॥ ३ ॥
क्षमागुण आर्जव मार्दव चित धरो।
सत्य शील संतोष, मोक्ष मिलायके ॥ ४ ॥
देव गुरु शास्त्र तीन पद अटल रहो।
धर्म कहे भव्यजीव, प्रमाद नशायके ॥ ५ ॥

[भजन नं. १०]

॥ तर्ज-मेरे शंभु कैलास बताया करो ॥

गुरु कुन्थु कहे दान देते रहो।
खरचा धनका धरममें किया तो करो ॥ टेर ॥
आहार अरु औषधिके दानसे, ज्ञान धन वृद्धी करो।
त्याग जप तप पुष्ट करता, कलमषल दूरी करो।
प्यारे प्रेमसे दान दिया तो करो ॥ १ ॥
देवदान नवदानसे, सेवा करे कर जोडके।
भोगभूमिमें जन्म तेरा, अंतरायको तोडके।
देता लाभ अमोल मिलाया करो ॥ २ ॥
दारिद्र सब ही भागता, अपकीर्ति नहिं होता कभी।
रोगादि संकट क्लेश भी नित, दूर ही रहता सभी।
सच्चे पात्रोंके चरण छूयां तो करो ॥ ३ ॥
त्यागी धरम कर जोड कहता यह ऋद्धि सिद्धि अमोल है।
ऋद्धि सिद्धि इन्द्रीके आश्रित जन्म यह बहुमोल है।
तीन पात्रोंको दान दिया तो करो ॥ ४ ॥ गुरु कुन्थु॥

[भजन नं. ११ तर्ज–भजन]

सरस्वतीना व्हाला, हमने मूल लागी छे ।
सावध्याना प्यारा हमने मूल लागी छे ॥ टेर ॥
इस हुंडावसरपणीमध्ये, गुरु महामतको पाया ।
दया करी सब जीवोंपर, हमने मूल लागी छे ॥
गुरु भेदाभेद बताया, अरु तत्वज्ञान दरसाया ।
फिर मोक्षमार्ग बतलाया, हमने मूल लागी छे ॥
गुरु सोती भारतको जगाई, अरु मिथ्या मोह नसाई
नेकीका रास्ता बताया, हमने मूल लागी छे ॥
अरु धर्मसागर झट आया, चरणोंमें वो लिपटाया ।
फिर हरष २ गुण गाय, हमने मूल लागी छे ॥
सारस्वतीना व्हाला, हमने मूल लागी छे ॥

[भजन नं १२]

॥ तर्ज–मोक्ष जानेका तुमने इरादा किया ॥
जैन साधूके तपका, चमत्कार है ।
इस चमत्कारको ही नमस्कार है ॥
घोर गरमी पड़े चाहे, बरसात हो ।
शीत मारी पड़े चाहे हीम पात हो ।
ये तो फिरते सदा ही, यथाजात हो ॥
मानो इनका प्रकृतिपे अधिकार है ।

पांव पैदल चले किन्तु थकते नहीं ॥
मुंह कभी दूसरेका ये तकते नहीं।
विघ्न बाधा इन्हें रोक सकते नहीं ॥
आत्म शक्तिका, इनके नहीं पार है ॥
विश्वकी संपदा इनके आगे पड़ी ॥
इन्द्रकी अप्सरा ये सेवामें खड़ी।
इनके दिलकी दिवालें बड़ी हैं कड़ी ॥
रहते निर्मोह निश्चल वा अविकार है।
सारी दुनियाके जीवोंके ये मित्र है॥
देते शिक्षाये सबको ही सुपवित्र है।
इनका उज्वल निराला ही चरित्र हैं ॥
इनका जीवन समीका सकाहकार है।
खाने पीनेकी इनको न परवाह हैं ॥
न पलंगोंकी महलोंकी भी चाह है।
आत्मकल्याणका मनमें उत्साह है ॥
धन्य संसारमें इनका अवतार है।
देखो केशोंको कैसे ये उत्पाटते ॥
खेतसे घासको जैसे हो काटते।
कुछ भी चेहरेपे दुखको न उद्घाटते ॥
धर्म कहे जिना है इनका सुराकार है।

[भजन नं. १३]

॥ तर्ज—मेरे शम्भु कैलास बुलालो मुझे ॥

गुरू कुन्थु सिंधु चिरंजीवी रहो ।
चिरंजीवी रहो आरोग्य रहो ॥
धन्य है देश करनाटक तुम्हारो ।
नगर एनापुर चिरंजीवी रहो ॥ १ ॥
धन्य है श्रावक सातप्पा कुल तेरो ।
सरस्वती माता चिरंजीवी रहो ॥ २ ॥
विश्व उद्धार किया कुंथु गुरुवर ।
धर्म दिगम्बर चिरंजीवी रहो ॥ ३ ॥
स्वामे धन्य भये भये गुरुवर ॥
ज्ञान तुम्हारा चिरंजीवी रहो ॥ ४ ॥
स्वामी भरत ये नित चाहे ॥
स्वस्थ रहो आयु तुम्हारी चिरंजीवी रहो ॥ ५ ॥

[भजन नं. १४]

॥ तर्ज—तारों बरणको तारे ॥

पारसोला तेरी गली सुधर गईरे ॥ टेर ॥
गुरू पधारे सबको भाये सभीका किया सुधारा ।
कन्या विक्रये अरु मरण भोजका, गुरूने मूल उखाड़ा ॥ २ ॥
आचार विचारसे हीन भये है, जिसको गुरू सुधारा ।
उपदेशामृत पायकेरे, मनका मेल निकारा ॥ २ ॥ पारसोला ॥

सम्यक्त पकड मिथ्यात्व छोडदो, ये ही शिक्षा हमा
क्रोध तजो मायाको छोडदो हो जावों भवपार ॥ ३
त्यागी धर्म सबको समझावे, नेमको करदो गाढा ।
इन नेमोंको जो तोडोगा, नरको बीच पछाडा ॥ ४

[भजन नं. १९]

॥ तर्ज–माड छनगारीरा ढोला ॥

गुरू कुन्थु पधारे, हमको सुधारे, पारसोलापुरमें आय ॥ टेर ॥
कन्या विक्रये अरू मरण भोजने तुरत दीना निकार ।
उपदेशामृत पायकेरे हमको कीना नेहालरे ॥ गुरूराज ॥ १ ॥
संघसहित गुरुदेव पधारे, जय जय करे नर नार ।
भाग्य उदय अब हुआ हमारा, जल्दी करो भवपार रे ॥ गुरूराज ॥
विश्वका उद्धार किया है, रचिया ग्रन्थ अपार ।
ज्ञानामृत बोधामृते, शांतिसिन्धु सुखकाररे ॥ गुरूराज ॥ ३ ॥
नमिसागरजी, अजितसिन्धु हैं देवसेन गुरु लार ।
वीर गुरू, अरु बाहुबलीजी, हमरा करो उद्धाररे ॥ गुरूराज ॥ ४ ॥
त्यागी " धर्म " करे विनती क्षुल्लक आदिके लार ।
गुरू–चरणोंमे करजोरे, मूको नाही बिसाररे ॥ गुरू ॥ ५ ॥

[भजन नं. १६]

॥ तर्ज–तरकारी लेलो मालन आई बिकानेरसे ॥

कुन्थूसागर स्वामी अरजी मेरो सुनलीजिये ।
मोह मदिराको मैने पीदो, सुधबुध सब बिसराई ।
परवस्तुको आपनो जानके, नरक बिचे दुख पाये ॥ १ ॥

क्रोधघटों माया अतिभारी, लोभ बड़ो दुखदाई ।
तृष्णा नागनी नित २ डंके इनसे क्यों छुड़ाई ॥ २ ॥
अज्ञान अंधेरा भरा उर मेरे निज आतम न दिखाई
ज्ञानचिराग जगा गुरुदेवा सबको दोषा नसाई ॥ ३ ॥
विश्व उद्धार किया गुरुवर, जैनका झंडा फहराई ।
मोक्षमार्ग बताय भव्यको दुर्गतिसे लीना बचाई ॥ ४ ॥
त्यागी धर्म नित प्रति वन्दे, गुरुचरण चितलाई ।
मेरी नाव्री सुधार गुरु स्वामी कर्मोंको दोषा छुड़ाई ॥ ५ ॥

[भजन नं. १७]

॥ तर्ज-गुरुवर ज्ञान सिखाओ ना ॥

गुरुवर ध्यान लगाना, हमे सिखलाओ ना ॥ टेर ॥
संसार चक्करमें गुरुवर पड़ा हूं ॥
इससे छुड़ाओ मैं सन्मुख खड़ा हूं ।
मातापिता स्त्री पुत्रोंने पकड़ा ।
पीछे लगा है कषायोंका लकड़ा ।
सुशिक्षा हमसे सुनाओना ॥ गुरुवर ॥ १ ॥
इन्द्रियोंका-चक्कर अरु मायाकी आक है ।
करने न देते हैं पुण्य अरु दान है ।
वशत पड़ा जाय पीछे हैरान है ।
यही गुरुमें हमारा सवाल है ।
कुन्थुगुरू इससे छुड़ाओना ॥ गुरु ॥ २ ॥
अज्ञान अंधेराको हमसे भगाईये ।
ज्ञानके मारगपर हमको लगाईये ।

सुमति सखीसे हमको मिलाईये।
कुमतिसे दामन हमारा छुडाईये।
मोहराजाको गुरुवर हटाओना ॥ ३ ॥ गुरू ॥
त्यागी धरमकी यही अरज है
फिकर लगी है हमें मवकी मरज है।
और किसीकी न हमको गरज है।
गुरुवरके चरणोंमें यही अरज है।
मोक्षपंथ–पगदान सिखलाओना ॥ ४ ॥ गुरू ॥

[भजन नं. १८]

॥ तर्ज–दिलादे भीख दर्शनकी ॥

मजा जिनको फकीरीमे, अमीरी क्या विचारी है ॥ मजा ॥
हवा परमारका नाता, लगा है प्रेम आतममे।
तजा है क्रोध अरु माया, फिरे वन वन विहारी है ॥ मजा ॥
कभी वो धूपमें बैठे, कभी छायामें जा बेठे।
लगे बरसाद धुन मारी, छवी अक्कलकी न्यारी हैं ॥ मजा ॥ २ ॥
कभी लड्डू कभी पेडा कभी नीरस निराहार ॥
पिलावे धर्मवारीको इन्होंकी रीत न्यारी है ॥ मजा ॥ ३ ॥
करे उपकार दुनियांका, स्वयंका कोई नहि स्वार्थ,
दयाका है गुरू दरिया, सुमति हिरदे बिराजी हैं ॥ मजा ॥ ४ ॥
कहे किंकर धरम सागर भी हमे भी कोई नहि इच्छा ॥
रखलो चरणोंमे स्वामीजी, यही अरजी हमारी हैं ॥ मजा ॥ ५ ॥

[भजन नं. १९]

॥ तर्ज–बिना रघु नायके देखे ॥

श्री गुरू कुन्थुवर स्वामी, किया उद्धार भव्योंका ।
फैलाया जैनका झंडा, बजाया ज्ञानका डंका ॥ श्री ॥
खुलाई पाठशालाओं, मिटा अज्ञान दुनियांका ।
हुई धुनी ज्ञानकी घर घर, किया उद्धार भारतका ॥श्री॥
डुबे भव सिन्धुके माँही, किया उद्धार गुरुवरने ॥
किनारे किश्ति वो मेरी लगायत शीघ्रही धक्का ॥ श्री ॥
रचाये ग्रन्थ अतिभारी करी गुरु शिवकी तयारी ।
पिलाई ज्ञानकी झारी, हुआ है ज्ञान आतमका ॥ श्री ३ ॥
हुवे जो जैन जैनेतर, छुडाया मांस अरु मदिरा ।
सुनाया जैन तत्वोंको,किया गुरुराजने पक्का ॥ श्री ॥
कहे स्वामी धरम भी यों, किया उद्धार ऋषिसिवरने ।
लगाया ज्ञान मारगपर जमाया जैनका सिक्का ॥ श्री ॥

[भजन नं. २०]

॥ तर्ज–छनगालीरा ढोला ॥

गुरू कुंथु पधारे हमको उधारे चतुंगती दुख भार ॥
नर्क निगोदमें गुरूदेवा, पायो दुःख अपार ॥
एक स्वासमें अठदस वेरा, जनम्यो मर्यो दुखपार ॥ १ ॥
एक इंद्रिमें छेदन काटन, दो इंद्री दुख लार ।
तेइंद्री धाप्योसे मारा, चऊ इंन्द्री दुखकार ॥ २ ॥

पंच इन्द्रिमें जन्म हमारो, मन विन दुःख अपार ।
मनसचेत पंचेंद्री भयो तो, ईष्ट अनिष्ट दुखवार ॥ ३ ॥
पंच इंद्रिके दुखसे छुडायो, यही अर्जी हिये धार ॥
आप बीना कोन तारे गुरुजी, त्यागी-धर्म भी लार ॥४॥

[भजन नं. २१]

॥ तर्ज–तुमको लाखो प्रणाम ॥

कुन्थु सिन्धु ऋषिराजा, तुमको लाखो प्रणाम ॥
पनापुर शुभ नगर तुम्हारा वैश्यवर्णमें हुवा अवतारा
सातप्पाके लाडा तुमको लाखो प्रणाम लाखो ॥ १ ॥ कुन्थु ॥
धन्य देवी सरस्वती गुरुमाता जीवनके कुलमें जन्मे गुरु दाता॥
चारों वर्णको तारे तुमको लाखो प्रणाम ॥ ॥ कुन्थु ॥
उत्तर देश गुरुवरने तारे गुजरात प्रान्तका किया सुधारा ।
मेवाडमें पग धारे, तुमको लाखों प्रणाम ॥ ३ ॥ कुन्थु ॥
आत्मतत्व गुरुदेव बतावे, सब दुनियोंके मनमें आवे ।
कुरीतिका जडमूल उखारे लाखों प्रणाम ॥ ४ ॥
जैन अजैन गुरुके गुण गावे, दौड दौड चरणोंमें आवें ॥
त्यागी धर्म भी लार तुमको लाखो प्रणाम ॥५॥ कुंथु ॥

[भजन नं. २२]

॥ तर्ज–हम तो जिनवाणी सबको सुनाते जायेंगे ॥
हम गुरुवरके केशलोंच, देखनको आये हैं ।
देखनको आये हैं, सिरको झुकाये हैं ॥ हम ॥ टेर ॥

दिगंबर साधुका यही चमत्कार है ॥
चमत्कार ही को सदा नमस्कार है ॥
धन्य है गुरूवर तुमने शक्ति दिखाई है ॥
किसान खेतसे गास उखार फेंके ।
इसी तरह गुरूवर बालोंको खेंच नाखे ।
हम तो चरणोंमें शिरको झुकाये जायेंगे ॥
जैन अजैनोंकी मोह हुई है भारी ।
जय जय करे है सभी नरनारी ।
हम गुरूवरके गुणोंको गाते जायेंगे ॥
पंचम कालमें गुरूवर उद्धार किया ।
सोते हुवे को गुरूवर जगाय दिया ।
त्यागी भरत भी धन्यवाद गाये जाये हैं ॥

[भजन नं. २१]

गुरूवर मोक्षका मारग बताते जायेंगे ॥
बतायें जायेंगे, सुनाये जायेंगे ॥ गुरूवर ॥
गुरूवरके उपदेशसे, पाखंडका नाश हो ।
सच्चे तत्त्वोंका हृदयमें प्रवेश हो ।
झूठे तत्त्वोंको गुरूवर छुडाते जायेंगे ॥१॥गुरू॥
अजैनोंके हृदयमें धर्मका वास करो ॥
जैनोंके हृदयमें सम्यक् प्रकाश करो ।
गुरुवर चारो वर्णको [illegible] जायेंगे ॥ गुरू ॥ २ ॥

कन्या विक्रयका दुःख, गुरुवरने छुडादिया।
मरण भोजका मूल जडसे हटाय दिया।
भव्य जीवोंके हृदय, जगाते जायेंगे ॥ गुरू ॥ ३ ॥
ब्राह्मण क्षत्री भव्य ये पुकार करे।
धन्य है गुरुवर, हमा उद्धार करे।
भवसिंधुसे हमको तिराते जायेंगे ॥ गुरू ॥ ४ ॥
धन्य है गुरुवर तुम्हारा ही मात पिता।
काम देव योधाकों, कुंथु गुरूने जीता।
त्यागि भरमको शरणोंमें लगाते जायेंगें ॥ ५ ॥ गुरू ॥

[भजन नं. २४]

॥ तर्ज–ब्रजराज आज सांभरो बंशी बजाय गयो ॥

शरन पडीकी लाज गुरू राख लीजियें।
करके दया दयाल, गुना माफ कीजियें ॥ टेर ॥
निगोदके अंदरमें गुरु दुख सया गया।
उसकी पुकार कुंथु गुरू सुनलीजिये ॥ १ ॥
निगोदसे निकलके मैं स्थावर तन धरा।
उस दुखकी अरज पर गुरु ध्यान दीजिये ॥ २ ॥
बे इंदी तेई इन्द्रि चौइन्द्रि त्रस हुआ।
विकलत्रयके दुखसे-छुडाय लीजिये ॥ ३ ॥
पन्च इन्द्रि हुवा असैनी न जही मिला।
ज्ञान बिना दुक्ख गणो उससे मिटाय दीजिये ॥ ४ ॥
इस दुखसे छुडाओ गुरु शरण आईया।
ये भरमकी पुकारपे गुरु लक्ष दीजिये ॥ ५ ॥

भजन नं. २५

॥ तर्ज लकड़ीका फारस ॥

आदिमें लकड़ी अन्तमें लकड़ी देख तमाशा लकड़ीका ।
रेट कुर्मी अर मेदी [illegible] भी डोटीके डंका लकड़ीका ॥ टेर ॥

सात बरसकी उमरकी प्यारे पढनेकी तेय्यारी की ।
पांच पचीस मिल पढने चाले हाथमें पाटी लकड़ीका ॥ १ ॥

बीस बरसकी उमर प्यारे, शादीका विचार किया ॥
पांच पचास बराती लेके तोरण बांधे लकड़ीका ॥ २ ॥

पचास बरसकी उमरमें, हाथमें डंडा लकड़ीका ।
चाकर लकड़ी बेठन लकड़ी देख तमाशा लकड़ीका ॥ ३ ॥

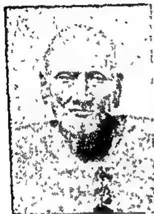
साठ बरसकी उमर प्यारे मरनेकी तेय्यारी की ।
पांच पंचीस कुटुम्बी मिलके टकटी बांधे लकड़ीका ॥ ४ ॥

आखि कुटुम्बी रोने लागें, टकटी उठाई पांचोंने ।
जलती लकड़ी पकली लकड़ी आगे गाड़ा लकड़ीका ॥ ५ ॥

ऊपर लकड़ी नीचे लकड़ी कंपा लगाया लकड़ीका ।
आप जले औरनकु जलावे, देख तमाशा लकड़ीका ॥ ६ ॥

घरको त्यागके मुनी भये हैं-हाथ कमंडल लकड़ीका ।
पेटीमें लकड़ी नित्य रहे सोनेका पाटा लकड़ीका ॥
त्यागी धरम कहे लकड़ी प्यारी चलन सहारा लकड़ीका ।
सांप सपेरे कुत्ता खाडे नंदीमें नावा लकड़ीका ॥ आ. ॥

विश्ववंद्य आचार्यश्रीका
अंतिम आदेश तथा उपदेश



" ॐ जिनाय नम ! ॐ सिद्धाय नमः । ॐ महाविदेह भरतैरावत-क्षेत्रस्थ भूत-भविष्य वर्तमान तीस चौबीसी भगवान् नमो नमः । सीमंधरादि बीस विहरमान-तीर्थंकर भगवान् नमो नमः । ऋषभादि महावीरपर्यंत चौदहसौ बावन गणधरदेवेभ्य नमो नमः । चौसठ ऋद्धिधारी मुनीश्वराय नमो नमः । अंतकृत केवलीमुनीश्वराय नमो नमः । प्रत्येक तीर्थंकर के समय होने वाले दश दश घोरोपसर्गविजयी मुनीश्वराय नमो नमः ।

ग्यारह अंग चौदह पूर्व शास्त्र महासमुद्र है । उसका वर्णन करने वाला आज कोई श्रुतकेवली नहीं है । कोई केवली भी नहीं है । श्रुतकेवली उसका वर्णन कर सकता है । मुझसरीखा क्षुद्र मनुष्य क्या वर्णन कर सकता है ! वह अपने आत्मा का कल्याण करने वाला है । जिनवाणी सरस्वती देवी अनन्त समुद्र प्रमाण है । फिर उसमें जिनधर्मको जो जीव धारण करेगा उसका कल्याण अवश्य होता है । अनन्तसुख को प्राप्त कर वह मोक्ष प्राप्ति कर

ता है। अनन्त आत्मों में एक अक्षर—एक ओं अक्षर—मात्र को जो धारण करता है उस जीव का कल्याण होता है। सम्मेद-शेखर में दो बन्दर लड़ते थे। णमोकार मंत्र के प्रभाव से स्वर्ग गये। श्रेष्ठी सुदर्शनने बैल को उपदेश दिया वह स्वर्ग गया। सप्तव्य-सनधारी अंजन चोर णमोकार मंत्र के उपदेशसे स्वर्ग गया, मोक्ष गया। और यह तो छोड़ो। कुत्ता महा नीच जाति का, जीवंधर-कुमार ने उपदेश दिया वह भी देवगति में गया, इतनी महिमा जिनधर्मकी है परन्तु इसे कोई धारण नहीं करता है। जैनी होकर भी जिन धर्म पर विश्वास नहीं। अनन्तकाल से जीव पुद्गल दोनों भिन्न २ हैं, यह सब जगत् जानता है। परन्तु विश्वास करते नहीं। पुद्गल अलग है जीव अलग है। दोनों ही भिन्न २ होते हुए भी अपन जीव हैं या पुद्गल इसका विचार करना चाहिए। अपन तो जीव हैं, पुद्गल नहीं। पुद्गल अलग है जड़ है, उसमें ज्ञान नहीं है। ज्ञान दर्शन चैतन्य यह गुण जीव में है। स्पर्श रस वर्ण गंध यह पुद्गलमें है। दोनों का गुणधर्म अलग है और दोनों अलग २ हैं। अपन जीव हैं या पुद्गल? अपन जीव हैं। पुद्गल के पक्ष में पड़ने के कारण अपनेको इस मोहनीय कर्म ने अपने जाल में फँसा लिया है। मोहनीय कर्म जीव का घात करता है; पुद्गलके पक्ष में पड़े तो जीव का घात होता है; जीव के पक्ष में पड़े तो पुद्गल का घात होता है। अपन तो जीव हैं। इसलिये जीव का कल्याण होना, जीव को अनन्त सुख में पहुँ-चाना, मोक्षको जाना, यह सब जीवमें होता है। पुद्गल मोक्ष

में नहीं आता है। इतना समझने पर भी यह सब जग मूल भटक रहा है, पंच पापों में पड़ा हुआ है और उसमें दर्शन मोहनीय कर्म के उदय ने सम्यक्त्वका घात किया है; चारित्र मोहनीय कर्म के उदयने संयमका घात किया है। इस प्रकार इन दोनों कर्मों ने अनन्त काल से जीव का घात किया है। फिर अपने को करना क्या चाहिए ?

सुखप्राप्ति जिसको करने की इच्छा हो उस जीव को हमारा आदेश इतना ही है कि दर्शन मोहनीय कर्म का नाश करके सम्यक्त्व प्राप्त करो। चारित्र मोहनीय कर्म का नाश करो, संयम को धारण करो। इन दो मोहनीय कर्मों का नाश कर अपना आत्मकल्याण करो, यह हमारा आदेश है, यह हमारा उपदेश है, सर्व जीवों को यही उपदेश है। अनन्त काल से यह जीव संसार में परिभ्रमण कर रहा है। किस कारण से ? एक मिथ्यात्व कर्म के उदय से। अपना कल्याण किससे होगा ? इस मिथ्यात्व कर्म के नाश से। अतः उसका नाश अवश्य करना चाहिये। सम्यक्त्व प्राप्ति कर लेना चाहिए। सम्यक्त्व किसे कहते हैं. इसे कुन्दकुन्द-स्वामी ने समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्ट-पाहुड और गोम्मटसारादि बड़े २ ग्रन्थों में वर्णन किया है। पर इसपर श्रद्धा रखता कौन ? अपना आत्मकल्याण करने वाला रखेगा। और इसी तरह संसार में भ्रमण करना है तो वह भ्रमण करता आ ही रहा है, उसका उपाय नहीं। परन्तु ऐसा करना उचित नहीं, यह हमारा आदेश है; उपदेश है। ओं सिद्धाय नमः।

फिर आपको क्या करना चाहिये ? दर्शनमोहनीय कर्मका क्षय करना चाहिये। किससे उसका क्षय होता है ? एक आत्मचिंतन से होता है। कर्म निर्जरा किससे होती है ? आत्मचिंतनसे होती है। तीर्थयात्रा करने पर पुण्यबंध होता है। प्रत्येक धर्मकार्य करने पर पुण्यबंध होता है। कर्म-निर्जरा होने के लिये आत्मचिंतन साधन है। अनन्तकर्मों की निर्जरा के लिये आत्मचिंतन ही साधन है। आत्मचिंतन किये बिना कर्मोंकी निर्जरा होती नहीं; केवलज्ञान होता नहीं, केवलज्ञान के बिना मोक्षप्राप्ति नहीं होती है। फिर अपने को क्या करना चाहिये ? चौबीस घण्टोंमें छह घड़ी उत्कृष्ट कही गई है, चार घड़ी मध्यम कही गई है, दो घड़ी जघन्य कही गई है। जितना समय मिले उतना समय आत्मचिंतन करे। कमसे-कम १०, १५ मिनट तो करे। कम-से-कम हमारा कहना है कि पांच मिनिट तो करे। आत्मचिंतन किये बिना सम्यक्त्व-प्राप्ति नहीं होती है। सम्यक्त्वके बिना कर्मोंका संसार-बंधन टूटता नहीं, जन्म-जरा-मरण छूटता नहीं। आगे सम्यक्त्व होने पर संयम के पीछे लगना चाहिए। यह चारित्र मोहनीय कर्मका उदय है कि सम्यक्त्व होकर ६६ सागर तक रहता है, परन्तु मोक्ष नहीं होता। क्यों ? चारित्रमोहनीय कर्म का उदय होने से। इसलिये चारित्रमोहनीय कर्म का क्षय करने के लिये संयम को ही धारण करना चाहिये। संयमके बिना चारित्र-मोहनीय कर्म का नाश नहीं होता। इसीलिये यह संयम कैसा भी हो, परन्तु संयम धारण करना चाहिये, डरो मत, संयम धारण करने

के लिये डरो मत। संयम धारण किये बिना सातवाँ गुणस्थान नहीं होता है। सातवें गुणस्थान के बिना आत्मानुभव नहीं होता है। आत्मानुभव के बिना कर्मों की निर्जरा नहीं होती। कर्मों की निर्जरा के बिना केवलज्ञान नहीं होता। ओं सिद्धाय नमः।

निर्विकल्प समाधि, सविकल्प समाधि, इस प्रकार समाधि के दो भेद कहे गये हैं। गृहस्थजन—कपड़ों में रहने वाले—सविकल्प समाधि करेंगे। मुनियों के सिवाय निर्विकल्प समाधि होती नहीं है। वस्त्र छोड़े बिना मुनिपद नहीं होता। भाईयो, डरो मत, मुनिपद धारण करो, यथार्थ संयम हुए बिना निर्विकल्प समाधि होने पर ही सम्यक्त्व होता है। इस प्रकार समयसारमें कुंदकुंद-स्वामीने कहा है। आत्मानुभवके बिना सम्यक्त्व नहीं होता है। व्यवहारसम्यक्त्वको उपचार कहा है। यह यथार्थ सम्यक्त्व नहीं है, यह साधन है। जिस प्रकार फल आने के लिये फूल कारण है, उसी प्रकार व्यवहार सम्यक्त्व कहा है। यह यथार्थ सम्यक्त्व नहीं। यथार्थ सम्यक्त्व कब होता है? आत्मानुभव होने के बाद होता है। आत्मानुभव कब होता है? निर्विकल्प समाधि होने पर होता है। निर्विकल्प समाधि कब होती है? मुनिपद धारण करनेपर ही होती है। निर्विकल्प समाधि का प्रारम्भ कब होता है? सातवें गुणस्थानसे प्रारम्भ होता है और बारहवें गुणस्थान में पूर्ण होता है; तेरहवें गुणस्थान में केवलज्ञान होता है, इस प्रकार नियम है। शास्त्रोंमें ऐसा लिखा है। इसलिये आप डरो मत। डरो मत। संयम धारण करो, सम्यक्त्व धारण करो, ये आपके कल्याण

करने वाले हैं। इनके सिवाय कल्याण होता नहीं। संयम के बिना कल्याण नहीं होता है। आत्मचिंतन के बिना कल्याण नहीं होता है। पुद्गल और जीव अलग २ हैं, यह पक्का समझना। तुमने साधारण समझ रखा है, यथार्थ अभी समझ में आया नहीं। यथार्थ समझ में आया होता तो तुम पुद्गल के मोह में तुम क्यों पड़ते ? । संसार में बाल-बच्चे, भाई-बन्धु, माता-पिता, ये सब पुद्गल के संबंधसे होने वाले हैं। जीव के सम्बन्धवाले कोई नहीं रे भाई ! जीव अकेला ही आनेवाला है। मोक्ष को भी अकेला जानेवाला है।

देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम तप और दान ये छह क्रिया कही गई है। असि मसि कृषि वाणिज्य शिल्प विद्या, ये छह आरंभ कहे गये हैं। इन छह आरम्भजनित कर्मों को क्षय करने के लिये छह क्रियाओं को करने की आवश्यकता है। यह व्यवहार हुआ। उससे यथार्थमें मोक्ष नहीं होता; ऐहिक सुख मिलेगा, पंचेन्द्रिय सुख मिलेगा, परन्तु मोक्ष नहीं मिलेगा। मोक्ष किससे मिलता है ? मोक्ष केवल आत्मचिंतनसे ही मिलता है। बाकी किसी भी कर्म से, क्रिया से कार्य से और किसी कारण से मोक्ष नहीं मिलता।

नय, शास्त्र, अनुभव इन तीनोंके समन्वय से विचार करो कि मोक्ष किससे मिलता है। बाकी सब रहने दो, अपना अनुभव क्या ? भगवानकी वाणी के सामने उसका कोई मूल्य नहीं है, वाणी सत्य है। उस वाणीपर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। उस

वाणी के एक शब्द सुनने पर एक शब्द से ही जीव तिर कर मुक्ति को जायेगा ऐसा नियम है। सत्य वाणी कौनसी है ? एक आत्मचिंतन। आत्मचिंतनसे सर्व कार्य सिद्ध होनेवाले हैं। उसके सिवाय कुछ भी नहीं रे भाई ! बाकी कोई भी क्रिया करने पर पुण्यबंध पड़ता है। स्वर्ग सुख मिलता है। संपत्ति, संतति, धनवान, स्वर्गसुख यह सब होते हैं, पर मोक्ष नहीं मिलता है। मोक्ष मिलने के लिये केवल आत्मचिन्तन है सो वह कार्य करना ही चाहिए। उसके बिना सद्गति नहीं होती, यह क्रिया करनी चाहिये।

सारांश धर्मस्य मूलं दया। जिनधर्मका मूल क्या है ? सत्य, अहिंसा। मुख से सभी सत्य, अहिंसा बोलते हैं, पालते नहीं। मुख से रसोई करो, भोजन करो, 'रसोई करो भोजन करो' कहने से पेट भरेगा क्या ? क्रिया किए बिना—भोजन किए बिना—पेट नहीं भरता है बाबा। इसलिए क्रिया करने की आवश्यकता है। क्रिया करनी चाहिए, तब अपना कार्य सिद्ध होता है। बाकी सब कार्य छोड़ो, सत्य—अहिंसा का पालन करो। सत्यमें सम्यक्त्व आ जाता है। अहिंसामें किसी जीव को दुख नहीं दिया जाता। अतः संयम होता है। यह व्यावहारिक बात है, इस व्यवहार का पालन करो। सम्यक्त्व धारण करो, संयम धारण करो, तब आपका कल्याण होगा। इसके बिना कल्याण नहीं होगा।

[जय जय]

—:X:—

अंतिम अमर संदेश

[ध्वनिमुद्रित उपदेश]

ओं जिनाय नमः । ओं [illegible]य नमः । ओं अर्हंत सिद्धाय नमः । पांच भरत पांच ऐरावतस्थ भूतभविष्य तीसचोवीसो भगवान् जिनाय नमो नमः । तीस चोवीस-भगवान जिनाय नमः । सीमंधरादि वीस तीर्थंकर भगवान् जिनाय नमः । ऋषभादि महावीरपर्यंत चौदाशे बावन गणधर देवाय नमो नमः । चारणऋद्धिधारी मुनीश्वरेभ्यो नमोनमः चौसठ ऋद्धिधारी मुनीश्वराय नमो नमः । अंतकृतकेवलिभ्यो नमो नमः । प्रत्येक तीर्थंकरावर दशदश घोरोपसर्गविजयी मुनीश्वराय नमो नमः ।

(मराठीमध्ये बोलूं-हां-चालू आहे कां !)

अकरा अंग चौदा पूर्व शास्त्र महासमुद्र आहे त्याचा वर्णन करणारे आज कोणी श्रुतकेवली नाही. श्रुतकेवली त्याचा वर्णन करणारा आहे. केवली वर्णन करणार आहे. आमच्यासारखे क्षुद्र मनुष्य काय वर्णन करतो. सर्वच लोकांच्या हा आपल्या आत्म्याचा कल्याण करणारा आहे. जिनवाणी सरस्वती श्रुतदेवी ▌ अनंत समुद्रासारखा आहे. तर त्याच्यामध्ये जिनधर्म हा कोणते जीव धारण करेल त्या जीवाचा कल्याण अवश्य होतो. अनंत सुखामध्ये त्याची प्राप्ति होऊन मोक्षप्राप्ति करून घेतो. असे नियम आहे. अनंत मंत्रामध्ये एक अक्षर एक ओं अक्षर एक अक्षर ओं

अक्षर इतका धारण केला तर सुद्धा त्या जीवाचा कल्याण होतो. सम्मेद शिखरामध्ये दोन बंदर लढत होते. णमोकार मंत्रापासून स्वर्गाला गेले. शेठी सुदर्शन बैलाला उपदेश दिला. स्वर्गामध्ये गेला. जो सप्त-व्यसनधारी अंजनाचोर होणारा तो णमोकार मंत्राच्या उपदेशाने स्वर्गाला गेला. मोक्षाला गेला. अरे हे तर सोडा, कुत्रा महा नीच जातीचा, जीवंधर मुनीने कुमा-राने उपदेश दिला. देवगति झाला. इतका महिमा जिनधर्माचा आहे. परंतु कोणी धारण करत नाही, जैना होका सुद्धा जिनधर्मावर विश्वास नाही. अनंत कालापासून जीव पुद्गल दोन्ही भिन्न आहे. हा सर्व जग सगळे जाणतो. परंतु विश्वास नाही करत. पुद्गल अलग आहे. जीव अलग आहे. तर दोन्ही भिन्न असून आपण जीव आहे का पुद्गल आहे हा विचार करावा. आपण तर जीव आहे, पुद्गल नाही. पुद्गल आहे अलग आहे. जड आहे. त्याच्यात ज्ञान नाही. ज्ञानदर्शन चैतन्य गुण हा जीवामध्ये आहे. स्पर्श रस वर्ण गंध हा पुद्गलमध्ये आहे. दोन्हीचे गुणधर्म अलग आहे व दोन्ही अलग अलग आहे. आपण जीव का पुद्गल ? आपण जीव आहे. पुद्गलाच्या पाठी पडून हा मोहनीय कर्म आपणाला वेढून घेतलेला आहे. मोहनीय कर्म जीवाचा घात करतो. पुद्गलाच्या पक्षाला पडला तर जीवाचा घात होतो. जीवाच्या

पक्षाला पडला तर पुद्गलाचा घात होतो. आपण तर जीव आहे. तर जीवाचे कल्याण होणे, अनंत सुखांत योवरिणे मोक्षास जीव जाणे, जीवाला होतो. पुद्गल मोक्षाला नाही जात, इतका समजून हा लोक सगळा जग सगळा बुडून गेलेला आहे. पंच पापात पडलेला आहे. आपली घात हा दर्शन मोहनीय कर्माच्या उदयाने सम्यक्त्वाचा घात केलेला आहे. चारित्र मोहनीय कर्मीच्या उदयाने संयमाचा घात केलला आहे. ह्या जीवाचा दोन्ही कर्म घात केलेला आहे अनंत कालापासून. तर आपण काय केले पाहिजे ?

सुखप्राप्ति ज्याला होण्याची इच्छा असेल तो जीव, आमचा आदेश इतकाच आहे की दर्शन मोह-नीय कर्माचा नाश करावा, सम्यक्त्व प्राप्ति करून घ्यावा. (दर्शनाश) चारित्र मोहनीय कर्माचा नाश करावा संयम धारण करावा. ह्या दोन कर्माचा मोह-नीय दोन मोहनीयचा नाश करावा आणि आपला आत्मकल्याण करावा. हे आमचा आदेश हे आमचे उपदेश आहे, सर्व जीवाला हेच आहे. अनंत काला-पासून हा जीव फिरत आलेला आहे. कशा कार-णाने ? एक मिथ्याकर्माच्या उदयाने फिरत आलेला आहे. तर आपले कल्याण कशाने होईल ? या मिथ्या-कर्माचा नाश पाहले केला पाहिजे. सम्यक्त्व प्राप्ति

सम्यक्त्व म्हणजे काय हा !

कुंदकुंद स्वामींने समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड, आणखी गोम्मटसारादि मोठे मोठे ग्रंथामध्ये वर्णन केलेले आहे. पण यात्यावर श्रद्धा ठेवणो कोण ? आपला आत्मकल्याण करणारा हो ठेवेल. आणि असेच अर संसारामध्ये फिरण्याचे असेल तर फिरत आलेलाच आहे. त्याला उपाय नाहीं. पण असे करू नये. हा आमचा आदेश आहे. उपदेश आहे. ओं सिद्धाय नमः ।

आपण काय केले पाहिजे ? दर्शन मोहनीय कर्माचा क्षय केला पाहिजे. कशाने क्षय होतो ? आत्मचितनाने होतो. कर्मनिर्जरा कशाने होतो ? आत्मचितनाने होतो. दानपूजा सगळे केले तर पुण्यबंध पडतो, तीर्थयात्रा केले तर पुण्यबंध पडतो, हरेक धर्माचे कार्य केलेतर पुण्यबंध पडतो. कर्मनिर्जरा होण्याला आत्मचितनच साधन आहे. केवलज्ञान होण्याला आत्मचिंतनच साधन आहे. हा अनंत कर्माचा निर्जरा होण्याला आत्मचितनच साधन आहे. आत्म्याचा ध्यान केल्याशिवाय कर्मांचा निर्जरा होत नाहीं. केवलज्ञान होत नाहीं, केवलज्ञानाशिवाय मोक्षप्राप्ति होत नाहीं, तर आपण काय केले पाहिजे. चोवीस घंटेमध्ये ६ घडी उत्कृष्ट सांगितलेले आहे. ४ घडी मध्यम सांगितलेले आहे. दोन घडी जघन्य सांगितलेले आहे. जितके वेळ मिळेल तितके करावा. निद्रानला १०॥५

मिनिट तरी करावा. निदानक्षा आमच्ये म्हणजे पांच मिनिट तरी करावा. आत्मचिंतन करावा. आत्मचिंतन केल्याशिवाय सम्यक्त्वप्राप्ति होत नाही. सम्यक्त्वा-शिवाय कर्मांचा संसारबंध तुटत नाही. जन्म जरा मरण हा तुटत नाही. सम्यक्त्वाशिवाय. पुढे सम्यक्त्व झाल्यानंतर संयमाचा पाटी लागला पाहिजे. या चारित्र मोहनीय कर्मांचा उदय आहे. सम्यक्त्व होऊन ६६ सागरपर्यंत राहील. मोक्ष होत नाही. कां ? चारित्र मोहनीय कर्मांचा उदय असल्याकारणाने. तर चारित्र मोहनीय कर्मांचा क्षय करण्याकरितां संयमच धारण करायला पाहिजे. हरेक जीवाने संयम धारण करायलाच पाहिजे. संयमाशिवाय चारित्र मोहनीय कर्मांचा क्षय होत नाही. तर या संयम कसे मी असो पण संयम धारण करावला पाहिजे, भिवू नका ! संयम धारण करा-यला भिऊ नका. संयम धारण केल्याशिवाय सातवे गुणस्थान होत नाही. फर्मांच्यात सातवे गुणस्थान होत नाही. सातव्या गुणस्थानाशिवाय आत्माचा अनुभव येत नाही. आत्म्याचा अनुभवाशिवाय कर्मांचा निर्जरा होत नाही. कर्मांच्या निर्जराशिवाय केवलज्ञान होत नाही. 'ओं सिद्धाय नमः ।

निर्विकल्प समाधि, सविकल्प समाधि दोन भेद सांगितलेले आहे. गृहस्थी कपडेमध्ये करणारे सवि-कल्प समाधि करतील. मुनिशिवाय निर्विकल्प समाधि

होत नाही. मुनी कपडा काढल्याशिवाय मुनिपद येत नाही. बाबांनो भिऊ नका. मुनी पदवी धारण करा. वरीवर संयम झाल्याशिवाय निर्विकल्प समाधि होत नाही. निर्विकल्प समाधि होत नाही. निर्विकल्प समाधि झाला तरच सम्यक्त्व होतो. असे समयसारामध्ये कुंदकुंद स्वामींनी सांगितलेले आहे. आत्मानुभवाशिवाय सम्यक्त्व होत नाही. उपचार सांगितलेला आहे व्यवहार सम्यक्त्व. हा खरा सम्यक्त्व नाही आहे. हा साधन आहे. फळ येण्याला फूल जसे कारण आहे तद्वत् व्यवहार सम्यक्त्व सांगितलेला आहे. खरा सम्यक्त्व नाही. खरा सम्यक्त्व केव्हा होईल. आत्म अनुभव झाल्यानंतर होतो. आत्मानुभव केव्हा होईल. निर्विकल्प समाधि झाल्यानंतर होतो. निर्विकल्प समाधि केव्हा होतो? मुनिपदवी धारण केल्यानंतरच होतो. निर्विकल्प समाधि केव्हा सुरू होतो? सातवे गुणस्थानापासून आरंभ होतो. बारावे गुणस्थानाला पूर्ण होतो. तेरावे गुणस्थानाला केवलज्ञान होतो असे नियम आहे. शास्त्रामध्ये असे लिहिलेले आहे. तर आपण भिऊ नका! का? संयम धारण करा, सम्यक्त्व धारण करा. हे आपले कल्याण करणारे आहेत. त्याच्याशिवाय कल्याण होत नाही. आत्मचिंतनाशिवाय कल्याण होत नाही. पुद्गल आणि जीव अलग भिन्न आहे. हा पक्का समजा. तुम्हाला सामान्य समजतो. खरे समजत नाही अजून-

घरे दार सगळे असावा तर ह्या पुद्गलाचे मोठाला
फजाता दुःखी पडला असता. मुले बाळे भाईबंधु मुले-
बाळे आईबाप हे सगळे पुद्गलाचे संबंधवाले आहेत,
जीवाचे संबंधवाले कोणी नाही रे बाबा. [जीव अकेला
आहे. अकेला आहे. ह्या जीवाचा कोणी नाही. कित्येक
भवभवामध्ये अकेला जाणार आहे. मोक्षाला ही [अकेला
जाणार आहे.]

देवपूजा गुरूपासिन स्वाध्याय संयम तप आणि दान
हा सहा क्रिया झालेला आहे. सांगितलेला आहे.
[लोकला] असि मसि कृषि वाणिज्य शिल्प विद्या
हा सहा धंदा सांगितलेला आहे. हा सहा धंदाचे क्षय
करण्याकरिता ह्या सहा क्रिया करायला पाहिजे. हा
व्यवहार झाला. ह्याच्यापासून खरे मोक्ष होत नाही.
ऐहिक सुख मिळेल. पंचपाप त्याग केल्याने पंचेंद्रिय
सुख मिळेल. हा मोक्ष नाही मिळत. मोक्ष कशाने
मिळतो. बाकी कोणत कर्माने कोणते क्रियाने कोणते
कार्याने कोणते कारणाने. [मोक्ष नाही मिळत]

नय शास्त्र अनुभव ह्या तीन्हींचे मेळ घालून
बघावा म्हणजे कशाने मोक्ष मिळतो. बाकी सगळे
असू दे आपला अनुभव करावा । भगवानच्या वाणीवर
काही विकल्प नाही. सत्यवाणी आहे. वाणीवर दृढ
विश्वास ठेवला पाहिजे. हा वाणीचे एक अक्षर ऐकले
तर एक अक्षराने जीव तरून मुक्तीला जाईल असा
नियम आहे. तरी ह्या वाणीमध्ये विश्वास ठेवावा.

सत्यवाणी कोणता आहे ? एक आत्मचिंतन. आत्मचिंतनापासून सगळे कार्य साध्य होणार आहे, त्याच्याशिवाय काही नाही रे बाबा ! बाकी कांही क्रिया केला तर पुण्यबंध पडतो, स्वर्गसुख मिळतो, राज्यपदवी मिळतो, संपत्तिवान होतो, संतति संपत्ति धनवान् हा सगळे मिळतो, पण मोक्ष नाही मिळत. मोक्ष मिळण्याला फक्त एक आत्मचिंतन आहे, तर ते कार्य करायलाच पाहिजे. त्याच्याशिवाय हा सद्गति [लोकला] सद्गति होत नाही. हा क्रिया केलाच पाहिजे.

सारांश, धर्मस्य मूलं दया, जिनधर्मांचा मूल कोणता ? सत्य अहिंसा. अरे तोंडाने सर्व सत्य अहिंसा म्हणतात पाळत नाही. तोंडाने स्वयंपाक करावा भोजन करावा स्वयंपाक करावे भोजन म्हटले (म्हटलेतर) पोट भरतो काय ? क्रिया केल्याशिवाय जेवल्याशिवाय पोट भरत नाही रे बाबा ! तर क्रियामध्ये आणला पाहिजे क्रिया केले पाहिजे, तेव्हां आपले कार्य साध्य होऊन जाते. बाकी सगळे काम सोडा. सत्य अहिंसा पाळा. सत्यामध्ये सम्यक्त्व येतो. अहिंसामध्ये कोणत्याही जीवाला दुःख नाही देता. हा व्यावहारिक, व्यावहारिक गोष्ट आहे. हा व्यवहारिक पाळा. सम्यक्त्व धारण करा. संयम धारण करा तर आपला कल्याण होतो. त्याच्याशिवाय कल्याण होत नाही.

[आता पुरे]